द न्यू ऑयल गेम

साभार: इंडियन एक्सप्रेस
(06 नवंबर, 2017)

विक्रम एस मेहता
(अध्यक्ष और वरिष्ठ सदस्य, ब्रुकिंग्स इंडिया)

यह आलेख सामान्य अध्ययन प्रश्न पत्र-II (अंतर्राष्ट्रीय संबंध) से संबंधित है।

इंपीरियल ब्रिटेन, जिसके साम्राज्य में सूर्य कभी भी अस्त नहीं हुआ था, 20 वीं सदी के आरंभिक भाग में मध्य पूर्व की राजनीति को तेल की अपनी आवश्यकताओं को सुरक्षित करने के लिए इस्तेमाल किया गया। अमेरिका, जो सदी के दूसरे छमाही में प्रमुख शक्ति था, ने अपने उदार सिद्धांतों को दरकिनार करते हुए सम्राटों और बेमिसाल तानाशाहों को एकजुट किया और यह भी सुनिश्चित किया कि कभी तेल से दूर न हो। इतिहास एक अपूर्ण गाइड है, लेकिन अफसोस हमारे पास केवल यही है। तो सवाल अब यह उठता है कि चीन, जो 21 वीं शताब्दी की बड़ी शक्ति है, मध्य पूर्व से तेल की आपूर्ति पर निर्भरता कम करने के लिए क्या करेगी? और इससे भारत पर पड़ने वाले परिणाम क्या हो सकते है?

वर्ष 1911 में, नौसेना के पहले लॉर्ड (नौसेना के जिम्मेदार कैबिनेट सदस्य), विन्स्टन चर्चिल ने अपने कैबिनेट सहयोगियों को ब्रिटिश नौसेना के लिए ईंधन के रूप में कोयले के स्थान पर तेल का उपयोग करने के लिए सिफारिश का समर्थन करने को कहा था। सबसे पहले तो कैबिनेट इससे नाराज था, क्योंकि ब्रिटेन के पास कोयले की भरपूर मात्रा थी और घरेलू तेल नहीं था। इस बदलाव ने अंतरराष्ट्रीय तेल की आपूर्ति की अनियमितता के लिए नौसेना का पर्दाफाश किया। चर्चिल ने इन चिंताओं को आर्थिक और भू-राजनीतिक तर्क के संयोजन के साथ जोड़ा। उन्होंने तर्क दिया कि यह स्विफ्ट जहाज की गति बढ़ाएगा; यह समुद्र में ईंधन भरने की अनुमति देगा और चूंकि तेल की तुलना में कोयला भारी था, यह भंडारण की भी सुविधा प्रदान करेगा, जिससे जहाजों की शक्ति बढाई जा सकेगी। उन्होंने कहा, ब्रिटेन सख्त सत्ता और राजनीतिक झगड़े के संयोजन के माध्यम से मध्य पूर्व से तेल की आपूर्ति सुरक्षित करेगा। इस तरह ये एक एंग्लो-पर्सियन कंपनी के माध्यम से कामयाब हुए, जिसमें 1935 में इसका नाम बदल कर एन्लो-ईरानी तेल कंपनी रखा गया और 1954 में ब्रिटिश पेट्रोलियम कंपनी हो गया। चर्चिल के फैसले ने तेल युग की शुरुआत और तेल राजनीति की महान खेल की शुरूआत के रूप में चिह्नित किया, जहाँ पिछले कुछ वर्षों में इस क्षेत्र को मजबूती मिली है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, अमेरिका विश्वव्यापी वैश्विक राजनीतिक, आर्थिक और सैन्य शक्ति के रूप में उभरा। तेल की आपूर्ति की सुरक्षा इस विकास के एक महत्वपूर्ण घटक थे। इस सुरक्षा की रक्षा के लिए और लोकतंत्र और आजादी के प्रति अपनी वचनबद्ध प्रतिबद्धता के विपरीत, अमेरिका ने क्षेत्र के अधिकारियों को सुरक्षा की निहित गारंटी प्रदान की। और कभी-कभी इस गारंटी की पूर्ति की ओर, उन्होंने स्पष्ट रूप से हस्तक्षेप भी किया। पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति जॉर्ज डब्लू. बुश शायद हमें एक दिन यह बता सके कि इराक ष्बड़े पैमाने पर विनाश के हथियार विकसित कर रहा या नहीं, के मुद्दे पर ठोस साक्ष्य की कमी के बावजूद, उन्होंने इराक पर बमबारी का आदेश दे दिया, लेकिन तब तक, इनका प्रमुख उद्देश्य इराक के तेल संसाधनों पर नियंत्रण रखना होगा। आज, इस स्पष्ट हस्तक्षेप के असफलता के कारण मध्यपूर्व में सांप्रदायिक तनाव, नागरिक संघर्ष और कट्टरतावाद को कम नहीं किया जा सकता है।

तो अब सवाल यह उठता है कि चीन, जो 21 वीं सदी की एक बड़ी शक्ति है, कैसे अपनी ऊर्जा हितों की रक्षा करेगी? तेल की आपूर्ति को सुरक्षित रखने के लिए यह कैसे अपनी राजनीतिक और आर्थिक नीतियों का उपयोग करेगी? इन सवालों ने कम्युनिस्ट पार्टी के हाल ही में संपन्न 19 वीं पीपुल्स पार्टी कांग्रेस में दिए गए संकेतों के प्रकाश में प्रासंगिकता को बढ़ा दिया है। चीन के नेताओं ने संसद में घोषित किया कि चीन अब अपने योग्यता को नहीं दबाएगा और न ही अपना समय खराब करेगा, यह पूर्व राष्ट्रपति डेंग जियाओपिंग की सलाह के संदर्भ में था, जहाँ इन्होने कहा था कि देश अपनी ताकत का पोर्न उपयोग नहीं कर रहा है, क्योंकि चीन देश इस ऐतिहासिक समय पर एक शक्तिशाली और दुनिया का केंद्र बनने के लिए तैयार है।

चीन की वैश्विक आकांक्षाओं में आई चिंता, बिलकुल शाही ब्रिटेन और महाशक्ति अमेरिका की महत्वाकांक्षाओं की तरह है, अर्थात तेल आयात पर निर्भरता। चीन प्रति दिन लगभग 13 मिलियन बैरल तेल (एमबीडी) का उपभोग करता है। इनमें से 60 प्रतिशत आयात किया जाता है, जिनमें से 50 प्रतिशत (लगभग 4 एमबीडी) मध्य पूर्व, मुख्य रूप से इराक, ईरान और सऊदी अरब से प्राप्त होता है, हार्मुज की स्ट्रेट्स, मलक्का की जलडमरूमध्य और विवादित दक्षिण चीन के समुद्र तटों के माध्यम से। चीनी नेतृत्व इस चिंता से पूरी तरह वाकिफ हैं और वर्षों से ऊर्जा के गैर-तेल स्रोतों में निवेश करके जोखिम को कम करने की मांग करते आये है। उदाहरण के लिए, उन्होंने अगले चार वर्षों में सौर और पवन के लिए 340 बिलियन डॉलर की राशि निवेश करने की योजना बनाई है। यह दुनिया के किसी भी अन्य देश से ज्यादा है। इसके साथ ही ये 34 परमाणु रिएक्टरों का संचालन कर रहे हैं और अन्य 20 निर्माणाधीन हैं। और उन्होंने रूस, मध्य एशिया और ऑस्ट्रेलिया के साथ दीर्घकालिक गैस आपूर्ति सौदों में भी निवेश किया है। इन सबके बावजूद, इन्होने अपने आयात की खाई को बंद करने में कामयाबी हासिल नहीं की है। इसका कारण डीजल / गैसोलीन ईंधन वाले वाहनों की बढ़ती मांग है। उनमें से 21 लाख अकेले 2016 में ही देखा गया था। चीन दुनिया में आज कच्चे तेल का सबसे बड़ा आयातक है और निकट भविष्य तक भी यही सिलसिला कायम रहने वाला है।

चीन ने वर्षों से, मध्य पूर्व में एक कम प्रोफाइल अपनायी है। यह आर्थिक सहायता प्रदान करती है, लेकिन यह पारंपरिक महान शक्ति राजनीति में एक सक्रिय भागीदार नहीं है। हाल ही में, यह विचारधारात्मक अज्ञेयवादी पहल के कई पहलुओं के साथ पूर्व बढ़ गया। यह सीरिया के राष्ट्रपति बशर-अल-असद के समर्थन में ईरान के साथ अपनी भूमिका निभाता है और ईरानी नौसेना के साथ हार्मुज की स्ट्रेट्स में एक छोटे पैमाने पर नौसैनिक अभ्यास भी किया है। साथ ही इसने ईरान के कट्टर शत्रु, सऊदी अरब के राजा सलमान को

मार्च 2016 में बीजिंग के लिए स्वागत किया और अप्रैल 2017 में देश में चीनी ड्रोन बनाने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर भी किया है। यह भी अटकलें हैं कि चीन सऊदी राष्ट्रीय तेल कंपनी अरमको में हिस्सेदारी खरीदने में दिलचस्पी ले रहा है, यह एक वैल्यूएशन पर है जो इसे लंदन या न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज में सार्वजनिक लिस्टिंग के विनियामक और प्रकटीकरण परेशानियों का सामना करने की आवश्यकता को खत्म कर देगा। अब सवाल यह है कि क्यों यह रुचि बढ़ रही है? शायद यह अमेरिका द्वारा छोड़े गये खाली स्थान को भरने के लिए है। वैसे अधिक संभावना है, अपनी तेल की आपूर्ति को सुरक्षित करने के लिए।

मध्य पूर्व में भारत के प्रमुख रणनीतिक हित हैं, तेल के लिए इस क्षेत्र पर अपनी निर्भरता के अलावा, इसके पास आठ मिलियन नागरिक हैं, जो प्रति वर्ष लगभग 70 अरब डॉलर का विमोचन करते हैं। इस क्षेत्र में एक आक्षेप भारत को एक विशाल रसद और वित्तीय सिरदर्द देगा। चीन एक बड़े खेल की तैयारी में है, इसलिए भारत को भी अपनी चाल को निरंतर रूप से निरीक्षण करना चाहिए।

पेट्रोलियम निर्यातक राष्ट्र संगठन (OPEC)

उद्भव एवं विकास

- पेट्रोलियम निर्यातक राष्ट्र संगठन (Organisation of the Petroleum Eñporting Countries–OPEC) की स्थापना में 1960 में बगदाद (इराक) में हुआ तथा 1961 में ईरान, इराक, कुवैत, सऊदी अरब और वेनेजुएला के द्वारा इसका औपचारिक गठन हुआ।
- उसके बाद कतर (1961), इंडोनेशिया और लीबिया (1962), अबू धाबी (1967–1974 में इसकी सदस्यता संयुक्त अरब अमीरात को स्थानान्तरित कर दी गई); अल्जीरिया (1969), नाइजीरिया (1971); इक्वाडोर (1973), तथा; गैबन (1975); तथा 2007 में अंगोला ओपेक के सदस्य बने।
- 1965 में ओपेक के मुख्यालय को जेनेवा से स्थानान्तरित करके विएना कर दिया गया।
- दिसंबर, 1992 से अक्टूबर, 2007 तक इक्वेडोर ने अपनी सदस्यता निलम्बित रखी। लेकिन 2007 में पुन: स्वीकार कर ली। 1995 गैबन और जनवरी 2009 में इंडोनेशिया ने इस संगठन की सदस्यता त्याग दी।
- इस प्रकार अब (2014 तक) इसके मात्र 12 सदस्य हैं। इसकी सदस्यता उन राष्ट्रों के लिए है, जो पर्याप्त मात्रा में अशोधित तेल निर्यात करते हैं तथा जिनके हित इन देशों के हितों से मिलते-जुलते हैं।
- समान हितों वाला कोई भी देश ओपेक का पूर्ण सदस्य बन सकता है, बशर्ते कि कुल प्रभावी सदस्य संख्या का 3/4 इसका समर्थन करे तथा समर्थन करने वालों में पांचों संस्थापक देश भी हो।
- वर्तमान में ओपेक विश्व के एक-तिहाई तेल के उत्पादन के लिए उत्तरदायी है (1973 और 1980 में यह क्रमश: 55 प्रतिशत और 45 प्रतिशत तेल उत्पादन के लिये जिम्मेदार था) तथा विश्व के कुल तेल भण्डारों का तीन-चौथाई ओपेक देशों में है।

उद्देश्य

- ओपेक के प्रमुख उद्देश्य हैं-सदस्य देशों की पेट्रोलियम नीतियों में समन्वय स्थापित करना तथा एकीकरण लाना; आंतरिक तेल मूल्यों के स्थिरीकरण के लिए युक्ति ढूंढना ताकि हानिकारक और अनावश्यक मूल्यों और आपूर्ति में उतार-चढ़ाव समाप्त हो सके।

संरचना

- ओपेक अपने सम्मलेन, गवर्नर बोर्ड, आर्थिक योग बोर्ड, तथा सचिवालय के माध्यम से कार्य-निष्पादन करता है।
- सम्मेलन संगठन का सर्वोच्च अंग होता है।
- यह सभी सदस्य देशों के प्रतिनिधियों (समान्यतया तेल मंत्री) से बना होता है। प्रत्येक प्रतिनिधि को एक मत प्राप्त रहता है।
- सम्मेलन की प्रत्येक वर्ष एक बैठक होती है, जिसमे नीति निर्धारण, बजट अनुमोदन तथा गवर्नर बोर्ड की अनुशंसाओं पर विचार होता है।
- सभी निर्णय (कार्य प्रणाली से संबंधित निर्णयों को छोड़कर) सर्वसम्मति से लिये जाते हैं।
- सम्मेलन का प्रस्ताव उस बैठक की समाप्ति के 30 दिनों के बाद प्रभावी हो जाता है, जिस बैठक में उसे अपनाया गया है तथा जब तक कि एक या अधिक सदस्यों ने इस प्रस्ताव के विरोध में सचिवालय में आवेदन नहीं किया है।
- गवर्नर बोर्ड, जिसका प्रधान अध्यक्ष कहलाता है, सम्मेलन के समक्ष वार्षिक बजट, रिर्पोटे और सिफारिशें प्रस्तुत करता है।
- इसकी वर्ष में कम-से-कम दो बार बैठक होती है, जिसमें सभी निर्णय उपस्थित सदस्यों के साधारण बहुमत के आधार पर लिये जाते हैं।
- गवर्नर, जो सदस्य देशों द्वारा मनोनीत तथा सम्मेलन द्वारा अनुमोदित होते हैं, का कार्यकाल दो वर्षों का होता है। संगठन के अधिशासी कार्यों के लिये सचिवालय उत्तरदायी होता है।

संभावित प्रश्न

वर्तमान में चीन की मध्य पूर्व देशों में बढ़ती रुचि भारत के लिए चिंता का विषय बन चुका है। इस कथन के सन्दर्भ में भारत को अपने विदेश नीति में क्या अपेक्षित सुधार लाने चाहिए? चर्चा कीजिये। (200 शब्द)

Currently, growing interest in China's Middle East countries has become a matter of concern for India. In relation to this statement, what should India need to improve in its foreign policy? Discuss. (200 words)